पी. एम. लाड

चीकू की कहानी

1981-82 में भोपाल में वन विहार (खुला अजायबघर) बनने की शुरुआत हो रही थी। इसमें मध्यप्रदेश में पाए जाने वाले प्राणियों को रखने का विचार था। इनके लिए बाड़े बनाए जा रहे थे। लोगों के पालतू शाकाहारी प्राणी इकट्ठा होने शुरू हो गए थे। इन्हीं दिनों एक खबर मिली कि जबलपुर के पास सिहोरा के वनों में एक बाघ का बच्चा मिला है जिसे भोपाल लाया जा रहा है। खबर सुनकर जितनी खुशी हुई उतनी ही चिन्ता भी हुई – उसे पाला कैसे जाए? माँसाहारियों के बच्चे पालना काफी मुश्किल काम होता है। ज़्यादातर तो बचपन में ही किसी न किसी बीमारी से मर जाते हैं।

उन दिनों श्री जे. जे. दत्ता मुख्य वन्य प्राणी अभिरक्षक थे और श्री रंजीत सिंह वन सचिव थे। सभी चिन्तित थे कि उस नन्हे मेहमान को पाला कैसे जाए! चर्चा के दौरान तय हुआ कि क्यों न उसे उतनी ही सावधानी और सुरक्षा से पाला जाए जितनी इंसानी बच्चे के लिए ज़रूरी होती है। तय हुआ कि मेरी पत्नी श्रीमती कमल लाड की देखरेख में उसे पाला जाए। मेरी पत्नी एक स्त्री रोग विशेषज्ञ हैं।

इस तरह वो बच्चा हमारे घर आ गया। आते ही हमारे बच्चों ने उसका नाम चीकू रख दिया। चीकू उस ज़माने में बच्चों की कार्टून पत्रिका का हीरो हुआ करता था। विचार-विमर्श के लिए श्रीमती लाड ने अपने दो शिशु रोग विशेषज्ञों को घर पर बुला लिया। डॉक्टरों ने तय किया कि चीकू को सावधानी और सुरक्षा से कैसे पाला जाए।

मेरी पत्नी को एक बार फिर से बच्चा पालने की ज़िम्मेदारी निभानी पड़ी। चीकू को दूध पिलाने के लिए कई बोतलें और निप्पल मँगवाए गए। रात में उसकी सुरक्षा और सोने के लिए एक पिंजरा भी लाया गया। चीकू को दूध पिलाने का ज़िम्मा श्रीमती लाड ने अपने हाथों में लिया। उसकी बोतलों का वे विशेष ध्यान रखती थीं। एक बड़े बरतन में उसकी बोतलें हमेशा उबलती रहती थीं। चीकू धीरे-धीरे बड़ा होने लगा। उसकी उछल-कूद, शरारतें पूरे घर में चलती रहतीं। कहीं बाहर न चला जाए इस डर से घर के बाहर फेंसिंग लगा दी गई थी। घर के गद्दे, तकिए उसके खास निशाने में रहते।

दूध के साथ-साथ उसे रबड़ी भी दी जाने लगी थी। इसे वह बहुत शौक से खाता था। जब वह तकरीबन 4-5 महीने का हुआ तो उसे एक खरगोश दिखाया गया, जिसे उसने एक माहिर शिकार की तरह मारा और सफाई से खा गया।

चीकू को पूरे घर में घूमने-फिरने की आज़ादी थी। कभी-कभी वह मकान की पहली मंज़िल के बरामदे में जा बैठता और सड़क से साफ दिखाई देता। उसे देखकर आसपास के कुत्तों ने घर के सामने से निकलना बन्द कर दिया था। सामने के प्रोफेसर मूर्ति की गाय जब चीकू को देख लेती तो दूध न देती। उन्होंने दरवाज़े पर गाय लाना बन्द कर दी।

हमारे घर बाघ का बच्चा देखने बहुत से लोग आते। एक दिन श्रीमती महाजन अपनी बेटियों के साथ चीकू को देखने आईं। तब तक चीकू थोड़ा बड़ा हो गया था। बच्चों पर हमला करने के लिए वह खासा उतारू रहता। इसलिए 6-7 साल से छोटे बच्चों को गोद में रखकर ही चीकू दिखाया जाता। बच्चे भी उपद्रवी चीकू को देख सहम जाते थे। कुछ दिनों बाद जब हम महाजन के घर गए तो उनकी बड़ी बेटी ने दरवाज़ा खोला। माँ के पूछने पर कि कौन आया है उसके मुँह से अनायास निकल पड़ा, चीकू की मम्मी आई हैं।

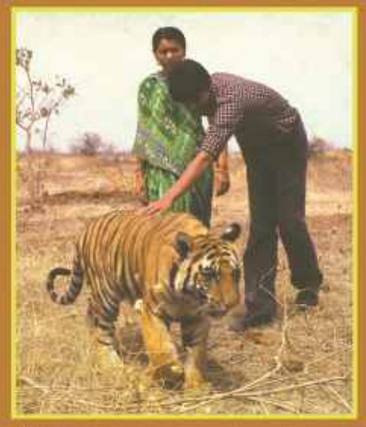

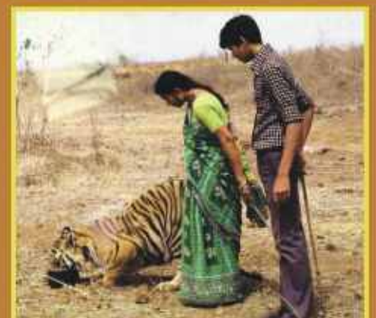

उन दिनों प्रसिद्ध पक्षी विज्ञानी सालिम अली भोपाल आए हुए थे। एक नई जीप उन्हें जंगल ले जाने वाली थी। जीप को गेट के अन्दर खड़ी कर ड्राइवर कुछ सामान लेने घर के अन्दर आया। चीकू मानो इसी की बाट जोह रहा था। देखते-देखते उसने जीप के पीछे की सारी सीटें फाड़ दीं। ड्राइवर घबराकर जीप वापस ले गया और श्री दत्ता को सारा किस्सा सुनाया। इस पर दत्ता साहब बोले, "मुख्य वन्य प्राणी अभिरक्षक की जीप की सीट शेर नहीं तो क्या कुत्ता फाड़ने की हिम्मत करेगा?"

चीकू अब सात महीने का हो गया था। उसे घर पर रखना अब खतरे से खाली नहीं था। वह छोटे बकरे तक का शिकार करने लग गया था। इसलिए बड़े दुखी मन से हमने उसे वनविहार भेज दिया।

हम लोग नियमित रूप से चीकू को देखने जाते। साथ में रबड़ी ले जाना कभी न भूलते, जिसे वह माँसाहारी होते हुए भी बड़े चाव से चाटता।

चूँकि चीकू घर में पला-बढ़ा था इसलिए उसे मनुष्यों से बिलकुल डर न लगता। और यही उसके लिए बड़ा महँगा पड़ा। वनविहार में बच्चों की आवाज़ सुनकर वह अपने ठण्डे छायादार घर को छोड़ बाहर आ जाता था। शायद इसी वजह से मई की तपती दोपहर में उसे लू लग गई। यही उसकी मौत का कारण भी बनी। तब तक वह 15 महीने का भरा-पूरा वयस्क बन चुका था। उस की याद में वनविहार के दक्षिणी द्वार का नाम "चीकू द्वार" रखा गया है।

बगुला रै

बगुला रै
कोड़े चाल्यो
नानी कै
कांई लेबा
गुड़-धाणी लेबा
कांई देख्यो
टाबरियो
कैंया रोयो
उआंय-उआंय

जयपुर के पास के एक गांव रेनवाल से प्रभात द्वारा संकलन
एक लोकगीत

तीन तीतरों के तिगाड़े को तजाकिस्तान के तगड़े तोते ने तालाब में तुक्के से तैराया।

अगले अंक में

इन करामाती तोतों से मिलेंगे।